प्रथम अध्याय

" शंकर शेष : व्यक्तित्व एवम् कृतित्व "

प्रथम अध्याय

" शंकर शेष : व्यक्तित्व एवम् कृतित्व "

प्रस्तावना :

रचनाकार के रचना को अच्छी तरह से समझने के लिए उनका व्यक्तित्व जानना लाभदायी सिद्ध होता है। व्यक्ति का बचपन जिस परिवेश बीता ,उस पर बचपन में हुऐ संस्कार आदि पर उसकी मानसिकता निर्भर होती है। डॉ. नगेन्द्र इस बारे में कहते है- " व्यक्ति और उसकी कृती में रक्त का संबंध है, अत्एव एक का विश्लेषण दूसरे की साथ लिए बिना असंभव है ।" [1] अत : हमें रचनाकार का व्यक्तित्व मालूम हो तो, उसकी रचना को सही अर्थ में समझने में सहायता मिलती है ।

इस अध्याय में रचनाकार के व्यक्तित्व एवम् कृतित्व के माध्यम से शंकर शेष को जानने की कोशिश की गयी है । जिन्होंने स्वातंत्र्योत्तर काल में हिंदी नाट्य साहित्य में असाधारण भूमिका निभायी है ।

1.1 जीवनी :

1.1.1 जन्मस्थल :

डॉ. शंकर शेष का जन्म मध्यप्रदेश के छत्तीसगढ़ जिले में स्थित बिलासपुर नगर में 2 अक्तुबर, 1933 में हुआ । बिलासपुर नगर पहाडों और जंगलों से घिरा हुआ एक प्राकृतिक वैभव से भरा -पूरा गाँव रहा है । इस नगर के बारे में सुनीलकुमार लवटे के शब्दों में कहा जाये तो - " ऊँचे -ऊँचे पर्वत, सघन वन और सुदूर फैले हुए धान के खेतों की प्राकृतिक सुषमा से घिरा यह नगर इतिहास काल से ही सामन्त सरदारों का गाँव रहा है। "[2] शेष जी का परिवार इन्ही सामंत परिवारों में से एक है । मूलतः विदर्भ (महाराष्ट्र) के रहनेवाले डॉ. शंकर शेष के पुरखों को बिलासपुर (मध्यप्रदेश) की जागीर राजे भोसले ने दी थी । इसी कारण उनके पुरखो कों महाराष्ट्र से बिलासपुर आना पडा था । तभी से वह बिलासपुर में स्थित थे ।

1.1.2 परिवार :

इनके पिता का नाम नागोराव शेष तथा माता का नाम सावित्रीदेवी था । नागोराव जी की दो पत्नीयाँ थी । पहली पत्नी से कुल आठ बेटे - बेटियाँ थी । पहली पत्नी की मृत्यु के पश्चात् उन्होंने सावित्रीदेवी से विवाह किया । सावित्रीदेवी से छह पुत्र उनके चौथे पुत्र का नाम ही शंकर था जो आगे चलकर डॉ. शंकर शेष के नाम से प्रसिद्ध हुआ । उनका परिवार संयुक्त होने के कारण बडा था ।

मेहमानों की नित्य रेलचेल थी । माता सावित्रीदेवी उन्हीं की आवभगत में लगी रहती थी । उन्हें अपने बच्चों के लिए भी समय नहीं मिलता था । नागोराव जी को नृत्य, नाटक और संगीत का बडा शौक था । इस संदर्भ में डॉ. विनय कहते हैं - " नाटकों में उनकी इतनी रूचि थी कि बालगंधर्व की नाटक कंपनियाँ उनके शहरो में आकर संगीत नाटकों का मंचन करे इसी उद्देश से उन्होंने ' जानकी विलास थियेटर ' का प्रारंभ किया था ।" [3] संगीत और नाटक से इतनी गहरी रुचि थी कि, नाटक देखने के लिए नागोराव बिलासपुर से नागपुर आया करते थे । वे तबला भी बजाते थे । ऐसे नाट्य, संगीत , कला और ऐश्वर्य से संपन्न परिवार में शेष पले - बड़े थे ।

1.1.3 प्राथमिक शिक्षा :

शंकर शेष की प्राथमिक शिक्षा बिलासपुर के प्राथमिक विद्यालय में हुआी । घर में संगीत, नाटक का मौहोल था ही रामायण, महाभारत की कथाओं का कथन भी होता था । इसी कारण बचपन से ही शेष को रामायण और महाभारत से विशेष लगाव था । जिस कारण उन्होंने उनके अनेक नाटकों में रामायण, महाभारत के मिथक का आधार लिया है।

1.1.4 माध्यमिक शिक्षा :

बिलासपुर में ही माध्यमिक शिक्षा लेते वक्त शेष ने कविता - कहानी लिखना प्रारंभ कर दिया । वही उनके साहित्यिक जीवन का बीजारोपण कहलायेगा। जो आगे जाकर बडा फला-फूला । किशोरावस्था में लिखी उनकी कहानी,कविताओं को पसंद भी किया गया । अपने विद्यार्थी जीवन में शेष एक होनहार और प्रतिभावान विद्यार्थी के रूप में मशहूर थे । उनके इन्हीं प्रारंभिक लेखन कार्य से उनके अंदर छिपे साहित्यकार की झलक मिलती है।

1.1.5 उच्चशिक्षा :

हायस्कूल की शिक्षा पूरी करने के बाद उनके पिता नागोराव ने उच्च शिक्षा के लिए उन्हें नागपुर भेजा । वहाँ उन्होंने मॉरिस कॉलेज में प्रवेश लिया । नागपुर की महानगरीय संस्कृति का परिवेश, शिक्षा का व्यापक क्षेत्र आदि के कारण उनका अनुभूति का क्षेत्र बढा । यहाँ आकर उन्हें डॉ. विनय मोहन शर्मा जैसे गुरू मिले, जिनके मार्गदर्शन में उनकी लेखनी और भी परिष्कृत हुआी । कविता, कहानियों के साथ -साथ वे एकांकी भी लिखने लगे । साथ ही उनकी रचनाएँ पत्र - पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगी थी । तभी वे आकाशवाणी जैसे जनसामान्य तक पहुँचनेवाले सशक्त माध्यम के संपर्क में आये। इस संदर्भ में डॉ. विनय कहते हैं " डॉ.शंकर शेष के लिखे रेडिओ - रूपक उन दिनों

चर्चा का विषय बन गया था । उनके कॉलेज मित्रों ने उन्हें 'लेखक' की संज्ञा से पुरस्कृत किया ।"[4] इससे उनका एक नाटककार के रूप के उदय हुआ । सन 1955 में लिखा 'मूर्तिकार' नाटक इन्हीं दिनों की उपज है, जो कॉलेज गैदरिंग को खेला गया था और काफी सफल भी हुआ था ।

सन 1956 में उन्होंने बी. ए. (आनर्स) की उपाधि नागपुर विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में प्राप्त की । सन 1962 में नागपुर विश्वविद्यालय से ही " हिंदी और मराठी कथा साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन " विषयपर डॉ. गोपाल गुप्ता के निर्देशन में पीएच.डी. की उपाधि हासिल की । सन 1978 - 79 में उन्होंने बंबई विश्वविद्यालय से " लिंग्विस्टिक्स " में प्रथम श्रेणी में एम.ए. पास किया ।

1.1.6 विवाह :

नागपुर के मॉरिस कॉलेज में शंकर शेष जब अधिव्याख्याता का काम कर रहे थे तभी सुधा अत्रे भी वहाँ एम.ए. की पढाई कर रही थी । मॉरिस कॉलेज में ही शंकर शेष और सुधा अत्रे की मुलाकात हुई इसी परिचय ने दोनों को 19 दिसम्बर, 1958 के दिन विवाह के अतुटे बंधन में बाँध दिया ।

1.1.7 व्यवसाय :

बी.ए. की उपाधि के बाद जीविका के लिए अनेक आकर्षक नौकरियों के पर्याय होते हुए भी शेष ने अध्यापक के रूप में जीवन बिताना स्वीकार किया । इससे शिक्षा क्षेत्र के प्रति उनकी गहरी आस्था ही प्रगट होती है। वे मॉरिस कॉलेज, नागपुर में ही अधिव्याख्याता बने । शंकर शेष की असाधारण क्षमता को देखकर मध्यप्रदेश सरकार ने उनकी शिक्षा सेवा विभाग में " आदिम जाति अनुसंधान अधिकारी " के पद पर नियुक्ति की । जिससे उन्हें छत्तीसगढ़ में रहने का अवसर मिला । वहीं पर उन्होंने छत्तीसगढ़ परिवेश की भाषा का शोधात्मक दृष्टि से शास्त्रीय अध्ययन - मनन कर शोध प्रबंध लिखा । जिसे मध्यप्रदेश ग्रंथ अकादमी ने " छत्तीसगढ़ी का भाषा शास्त्रीय अध्ययन " नाम से प्रकाशित किया ।

सन 1968 में पुनश्च भोपाल के " हमीदिया कॉलेज " में दो वर्ष तक का अध्यापन किया । सन 1970 में सरकार ने दुबारा उनकी नियुक्ति मध्यप्रदेश ग्रंथ अकादमी के " सहायक संचालक " के रूप में की । जो एक तरह से सरकार की ओर से उनका सम्मान ही था । अब वे लेखन कार्य में बडे जोरों से जुट गये। सन 1974 में मध्यप्रदेश की शासकीय सेवा से इस्तीफा देकर भारतीय स्टेट बैंक, बंबई के मुख्य कार्यालय में राजभाषा विभाग के मुख्याधिकारी बने और अंत तक इसी पद पर रहे ।

1.1.8 मृत्यु :

डॉ. शंकर शेष बंबई के कोलाहल से दूर प्रकृति की गोद में सन 1981 में दीपावली की छुट्टियाँ मनाने के हेतु से सपरिवार कश्मीर गये थे । श्रीनगर के " ग्रीन एकड " होटल में ठहरकर प्राकृतिक सुषमा में चंद आराम के पल बिताना चाहते थे। मगर नियति को कुछ और ही मंजुर था, जिसके सामने उनकी एक ना चली । 28 अक्तुबर 1981 को जब परिवार के सभी लोग खुशी - खुशी छुट्टियों का आनंद ले रहे थे तभी दिल की गति रुक जाने के कारण वे संसार को छोडकर चले गये । हिंदी नाट्य सृष्टि का यह सितारा अपने समुचित रोशनी से चमचमाने से पहले ही बुझ गया । जिससे हिंदी साहित्य में उत्पन्न शून्य को भर पाना असंभव है ।

1.2 व्यक्तित्व :

1.2.1 वेशभूषा :

डॉ. शंकर शेष की वेशभूषा एकदम साधी थी । उनको साफ - सुथरे कपडे पहनने का बडा शौक था । उन्हें सफेद कपडे पहनना पसंद था । वे घर में पाजामा और बनियन पहनते थे, तो बाहर जाते समय पतलून और कुर्ता पहनते थे । उन्हें सोलह - सत्रह साल से ही चश्मा लगा था जो उनके व्यक्तित्व को आकर्षक बनाता था ।

1.2.2 आदतें :

शेष जी रात को देर तक पढते थे और सुबह देर से उठते थे । उठते ही उन्हें चाय लगती थी और चाय की चुस्कियों के साथ वे अखबार पढते थे। उन्हें बातें करने की बड़ी आदत थी। बातें किये बीना वह रह नहीं सकते थे।इसी कारण अपने संपर्क में आये किसी भी व्यक्ति को अपना बना लेते थे। शेष खाने के बहोत शौकीन थे । उन्हें मीठी चीजें बहोत पसंद थी ।

1.2.3 पुस्तक प्रेमी :

उनको पुस्तकों का बडा शौक था । कहीं भी जाते तो पुस्तकों को खरीद लाते थे । बचपन से ही उन्हें पुस्तकें पढने का शौक था । कोई किताब मिलती तो उन्हें पूरा पढकर ही रहते । इसी कारण जब उनके तबादले हो जाते तो एक घर से दूसरे घर जाते वक्त घर के दूसरे सामानों से ज्यादा किताबों का ढेर ही अधिक रहता । मगर इससे उनके किताबें खरीदने के शौक में कभी कमी नहीं आयी । डॉ.

प्रकाश जाधव इस बारे में लिखते है " किताबों को इकठ्ठा करना उनका शौक था । सारी दुनिया से किताबों को खरीद लाते थे।" [5]

1.2.4 हँसोड व्यक्ति :

शेष जी को हँसी मजाक बहोत पसंद था । जब भी हँसते ठहाके मार कर हँसते। इतवार के दिन तो उनके घर महफिल सी लग जाती ।दोस्तों को बुलाकर, किसी नयी रचना को पढकर सुनाते या किसी अन्य की रचना का पठन होता । घर के सारे लोग भी उसमें शामिल होते थे। दिनभर गपशप, हँसी मजाक चलता रहता था ।इसी कारण उनके दोस्त भी बडी आतुरता से इतवार का इंतजार करते।

1.2.5 आदर्श अध्यापक :

शेष जी करीब दस वर्ष तक शिक्षा क्षेत्र से जुडे रहे । इस दौरान उन्होंने शिक्षा क्षेत्र में सम्मिलित अध्यापक, छात्र, और शिक्षा व्यवस्था का बडी सूक्ष्मता से निरीक्षण किया । उनकी कामना थी कि शिक्षा क्षेत्र राजानीति से दूर रहे । शिक्षा व्यवस्था को अपने आर्थिक लाभ के लिए चलानेवाले व्यवस्थापकों से तथा केवल रोजी -रोटी का साधन समझनेवाले अध्यापकों के इस नजरिए से वे काफी नाराज थे । इसी कारण छात्रों में भी अनुशासन तथा शिक्षा के प्रति लगाव आदि को उन्होंने महसूस किया था, जिसे उन्होंने अपने नाटक ' एक और द्रोणाचार्य ' में चित्रित किया है ।

वे खुद कॉलेज के छात्रों साथ भातृभाव रखते थे । उन्हें कोई भी मुश्किल हो,वे मदत करते थे । वे शिक्षा को अपना धर्म मानते थे । शिक्षा क्षेत्र से उन्हें काफी लगाव था । इसे वे एक जिंदादिल क्षेत्र मानते थे । यही वो क्षेत्र है, जहाँ से निकलनेवाले छात्र के हाथ में कल देश को चलाने की ड़ोर होगी । इसी कारण उन्हें अच्छे संस्कार देना अपना कर्तव्य है, ऐसा शेष जी मानते थे और यह जिम्मेदारी उन्होंने बखूबी निभायी ।

1.2.6 श्रेष्ठ प्रशासक :

शेष जी की असाधारण क्षमता को देखकर मध्यप्रदेश सरकार ने उनकी नियुक्ति शिक्षा सेवा विभाग में "आदिम जाति अनुसंधान अधिकारी " के पद पर की । छत्तीसगढ़ प्रदेश में जन्में,पले-बडे, शेष के मन में छत्तीसगढ़ी के प्रति अपनत्व का भाव था । इसी जिज्ञासा की पूर्ति के लिए उन्होंने इस कार्यकाल के दौरान ' छत्तीसगढ़ी का भाषा शास्त्रीय अध्ययन ' करके पूरी की । इस कार्य के असाधारण महत्व को देखकर मध्यप्रदेश ग्रंथ अकादमी ने उसे प्रकाशित किया । सन 1970 में सरकार ने दुबारा उनकी प्रतिनियुक्ति मध्यप्रदेश ग्रंथ अकादमी के 'सहायक संचालक ' के रूप में की ।

यह तो सरकार की ओर से उनका सम्मान ही था । चार वर्ष बाद उन्होंने इसका इस्तीफा देकर भारतीय स्टेट बैंक के बंबई के मुख्य कार्यालय में राजभाषा विभाग के मुख्याधिकारी का पद सँभाला । तब बैंको में कामकाज के लिए हिंदी शब्दावली तथा अनेक पत्र - पत्रिकाएँ तैयार की जिनके हिंदीकरण के लिए बेहद सहयोग हुआ। तथा बैंको में हिंदी के प्रयोग हेतु कई कार्यशालाओं का आयोजन भी लिया । शेष जी ने अथक परिश्रम से बैंको में राजभाषा का क्रियान्वयन करने में कीर्तिमान स्थापित कर दिया ।

इस तरह अपने जीवन का अधिकतर काल एक श्रेष्ठ प्रशासक के रूप में बिताया । फिर भी सभी से मिल -जुलकर बर्ताव करते थे । अपने रसिकता को भी कभी उन्होंने जाने नहीं दिया । वे अपने अधीनस्थ कर्मचारियों से भी विनम्रता से पेश आते थे । उनके साथ अपनत्व रखते थे ।

1.2.7 संघर्षशीलता :

शेष जी जीवन में संघर्ष को आवश्यक मानते थे । उनके जीवन में अनेक मुश्किलें आयी मगर उनका उन्होंने डटकर सामना किया । इस बारे में सुनीलकुमार लवटे जी कहते है - "संघर्ष पर उनकी गहरी श्रध्दा थी । जिंदगी में आनेवाली हर चुनौती का सामना करते समय, उन्होंने अनूठे साहस का परिचय दिया । हर उत्तरदायित्व को लगन से निभाना उनकी सहजवृत्ति थी ।" [6] उनके जीवन में आनेवाली मुश्किलें कभी उनकी जीवनपथ पर रुकावट नहीं बनी ।

1.2.8 क्रियाशीलता :

डॉ.शेष स्वभावत : क्रियाशील व्यक्ति थे ।हर पल किसी न किसी काम में व्यस्त रहते थे । बेफिजूल वक्त काटना उन्हें अखरता था। इस संबंध में एक वाकिया बडा ही मजेदार है । जब उनकी पत्नी सुधाजी ने एम.ए. के पर्चे दिये । परीक्षा के बाद वह घर में मासिक पत्रिकाएँ पढती थी । जब शेष जी ने देखा तो हैरान रह गये।इस संदर्भ में तुरंत अपने मित्र को डॉ. प्रभात को फोन किया," अरे भाई। तुम्हारी भाभी घर बैठे फालतू मैगेजिन पढकर समय बरबाद कर रही है । उसे पीएच.डी.के लिए कुछ विषय दे दो ।"[7] इस तरह वह निरंतर काम में व्यस्त रहने में विश्वास रखते थे ।

1.2.9 विनम्रता :

डॉ.शेष की सारी जिंदगी समृद्धि और सम्मान में बीती । अपने जीवन में उन्हें बहोत सम्मान मिले । फिरे भी वे सदा विनम्र रहे । जिस तरह कॉलेज के छात्रों से भातृभाव रखते थे उसी तरह कार्यालय में भी अपने अधीनस्थ कर्मचारियों से भी मिल -जुलकर बतार्व करते। इस संदर्भ में सुनीलकुमार लवटे कहते है -"डॉ. शंकर शेष की समूची जिंदगी समृद्धि और सम्मान में बीती । परन्तु

समृद्धि और सम्मान की नशा ने कभी उन्हें बदचलन नहीं बनाया । समृद्धि के होते हुए भी वे निहायत विनम्र रहे ।"[8] इसी विनम्रता के कारण वे हर किसी का दिल जीत लेते थे ।

1.2.10 अच्छा वक्ता :

डॉ.शेष जब किसी विषय पर बोलते तो श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाते । उनका भाषण सुनकर उस विषय का गहरा ज्ञान, चिंतन आदि का सहज पता चलता । अपने खुद को मिले ज्ञान को लोगों तक पहुँचाना चाहिए, ऐसी उनकी मनोकामना रहती । इसी कारण वे अपने विषय से एकात्म हो जाते और विषय का विशद विवरण करते । कॉलेज में भी छात्र उनके लेक्चर के समय खुश हो जाते ।

1.2.11 स्वाभिमानी :

डॉ.शेष स्वाभिमानी वृत्ति के व्यक्ति थे। अपने जीवन में कितनी भी मुश्किलें आनेपर भी वह उसके सामने झुके नहीं तो डटकर उसका सामना किया । उनका विश्वास था कि अगर सच्चाई के साथ मेहनत की जायें तो सफलता जरूर मिलेगी । इसके बारे में श्रीमती सुधाजी का कथन है -" मॉरिस की नौकरी छूट भी जाये तो किसी प्राइवेट कॉलेज में नौकरी मिल सकती थी । मैं भी एम.ए.थी ।हमारा गुजारा हो ही जाता, पर उनका स्वाभिमान आडे आता । उन्हें यह कतई पसंद नहीं था, कि मैं उनकी नौकरी छुट जाने की वजह से रायपुर या बिलासपुर रहूँ ।"[9]

1.2.12 प्रसिद्धि विन्मुख :

डॉ.शंकर शेष ने कितनी ही मौलिक रचनाओं का निर्माण किया । उनके कितने ही नाटक लोगों द्वारा बेहद सराहे गये। मगर फिर भी वह प्रसिद्धि से विन्मुख रहे । वे अपने आप को संपूर्ण साहित्यिक नहीं समझते थे, इसी कारण जब भी कोई व्यक्ति उन्हें उनकी कृति के बारे में कोई सुझाव या सलाह देता तो वो उसका चिंतन कर उसमें सुधार करते थे । उनमें आत्म सुधार की प्रवृत्ति थी । उनकी शायद ही कोई रचना हो जो एक बार लिखी गयी हो । किसी कृति को पूरा करते हुए और करने के बाद भी किसी व्यक्ति द्वारा उस कृति के बारे में कोई सुझाव आता जो उन्हें ठिक या पसंद आता तो वह नाटक या कृति को फिर से लिखते । वे प्रयोगधर्मी नाटककार थे । उनके कितने ही नाटक हिंदी नाट्य सृष्टि में अजर - अमर बन गये है । फिर भी खुद की प्रसिद्धि कर समाज के सामने अपने गुणों का ढिंढोरा पीटना उन्हें कतई मंजूर न था ।

1.3 कृतित्व :

डॉ शंकर शेष ने हिंदी साहित्य में विशेष कर नाट्य साहित्य में अपना महत्वपूर्ण एवम् बडा योगदान दिया है । वे नाटककार के रूप से ही विशेष जाने जाते है । उनके कुछ अपवादों को छोड सभी नाटकों का सफल मंचन हो चुका है । उनके लिखे नाटक पाठक और श्रोता दोनों द्वारा खूब पसंद किये गये हैं । उन्होंने नाटकों के साथ -साथ उपन्यास, बाल नाटक, अनुदित नाटक, एकांकी, पटकथा लेखन आदि विधाओं में भी काम किया है ।

नाटक :

1.3.1 मूर्तिकार :

डॉ.शंकर शेष का यह पहला नाटक हैं । यह नाटक उन्होंने नागपुर के मेडिकल कॉलेज के विद्यार्थियों की माँग पर लिखा था । इसमें शेष ने कला की साधना करनेवाले , सच्चाई और नेकी की राहपर चलनेवाले कलाकार को कितनी कठिनाईंयों का सामना करना पडता हैं यह बताया हैं । उसकी पत्नी ललिता उसका हर कठिनाई में साथ देती है । गलत रास्ते पर चलनेवाली अपनी ननद को सहारा दे उसके जीवन को बचाती है। यह नाटक मध्यवर्गीय जीवन का दस्तावेज हैं । हमारे समाज में कलाकारों की उनके जीवित रहते कद्र नहीं की जाती मगर उनके मर जाने के बाद उनके पुतले बनाकर घी के दिये जलाये जाते । इस विडंबना को मूर्तिकार के माध्यम से नाटककार बताना चाहता है । अत : कला के प्रति समर्पित कलाकार और उसे इस अभावग्रस्त जीवन में साथ देनेवाली उसकी पत्नी इनके सामने आनेवाली कठिनाइयों का चित्रण आदि विवेच्य विषय हैं ।

1.3.2 रत्नगर्भा :

पति - पत्नी के संबंधों को विषय बनाकर लिखे गये इस नाटक में पहले सौंदर्यवती पत्नी दुर्घटना की शिकार बन जब कुरूप बन जाती है तो उसके पति में आये परिवर्तन को चित्रित किया है । इसमें पत्नी के कुरूप बननेपर अपनी पति का पत्नी को मार डालने का प्रयत्न करना तथा अपनी ही साली पर नजर रखना तथा पेशे से डॉक्टर होकर भी अनैतिक आचरण करना आदि का चित्रण किया है । जिसके जरिए आधुनिक समाज में "मानव निरंतर मन की अपेक्षा तन की ओर अधिक आकृष्ट होने लगा हैं । उसकी सौंदर्यानुभूति शारीरिक सौंदर्य तक ही सीमित हुई ।" [10] इसे बताने का प्रयास किया है ।

1.3.3 नयी सभ्यता के नये नमुने :

दुराचारियों का दमन करनेवाले श्रीकृष्ण के पौराणिक मिथ का प्रयोग किया है । इसमें सज्जनता का बुरखा पहने समाजद्रोही लोगों का पर्दाफाश किया है । इस नाटक के जरिए यह बताया है कि समाजद्रोहियों की चाल किसी न किसी साजिश को लेकर ही चलती है । इस संदर्भ में डॉ. सुरेश गौतम और वीणा गौतम कहते है " आज की सभ्यता भी तो उसी को कहते है । जिसमें मुस्करा - मुस्कराकर आप किसी का गला काट लीजिए । आज यह पहचानना मुश्किल हो गया है कि किसकी मुस्कुराहट में अमृत है और किसकी मुस्कुराहट में जहर ।" [11]

अत : इस मिथक द्वारा चारित्र के पतन की समस्या एवम् समकालीन समाज व्यवस्था का चित्रण किया है।

1.3.4 तिल का ताड़ :

हास्य - व्यंग्यात्मक शैली में लिखा शंकर शेष का यह पहला नाटक है । कभी - कभी उलझन से बचने के लिए इंसान कोई स्वांग रचता है और वही तिल का ताड़ बन जाता है। यही इस नाटक के जरिए नाटककार को बताना है । एक झूठ को छुपाने के लिए दुसरा झूठ बोलना पडता है और फिर झूठी बातों का सिलसिला ही शुरू होता है , जिसमें झूठ बोलनेवाला आदमी ही फँस जाता है उसका मार्मिक चित्रण यहाँ किया है ।इस बारे में डॉ.सुनीता मंजनबैल कहती हैं - " नाटक का प्रधान उदेश्य मनोरंजन ही है, यद्यपि नाटक की नींव आवास के अभाव की समस्याही है। " [12]

1.3.5 बेटोंवाला बाप :

यह नाटक सन 1958 में लिखा गया । नागपुर में धनवटे नामक नाट्यगृह है,जो सभी आधुनिक सुविधाओं से संपन्न है । इस रंगभूमि पर मंचन होना हर नाटककार के लिए गौरव की बात थी । डॉ. शेष को यह गौरव भी प्राप्त हुआ था । इस संदर्भ में डॉ. मधुकर कहते हैं कि - " बेटोंवाला बाप " का "प्रथम मंचन " इसी नाट्यगृह में हुआ और बहुत सराहा गया । दुर्भाग्य से यह नाटक पुस्तक या पांडुलिपी में उपलब्ध नहीं है । श्रीमती सुधा शेष को भी वह उपलब्ध नहीं हो सका ।" [13]

1.3.6 बिन बाती के दीप :

डॉ. शंकर शेष की यह सर्वप्रथम प्रकाशित रचना है। श्री. अविनाश चासकर ने भोपाल में अपने निर्देशन में इसका प्रथम मंचन किया । इस नाटक को मध्यप्रदेश सरकार की ओर से द्वितीय पुरस्कार मिला ।

अपनी अतिरिक्त महत्वकांक्षा की पूर्ति के लिए अपने ही पत्नी के साहित्य को अपने नाम से छपवाकर प्रसिद्धि पाने की लालसा को रखनवाले चौर्य कर्म की प्रवृत्तिवाले पति का पर्दाफाश करना नाटक का मुख्य उद्देश है। शिवराज अपने अंधी पत्नी के अंधत्व का फायदा उठाकर उससे विश्वासघात करता है । जब उसकी पत्नी विशाखा को यह बात मालूम होती है तो वह शिवराज को क्षमा कर देती है। क्योंकि वह पती - पत्नी को एक इकाई मानती है । अत : यहाँ भारतीय पत्नी का चित्रण किया गया है । यह नाटक नायिकाप्रधान है । इसमें पति - पत्नी के बीच विश्वास और अपनी - अपनी सीमाओं का ज्ञान होना महत्वपूर्ण बात हैं इसे उसे उजागर किया हैं । जिससे पती - पत्नी का यह विवाह बंधन अटूट रह सके ।

1.3.7 बाढ़ का पानी :

सन 1968 में लिखे इस नाटक का प्रथम मंचन भोपाल की "नाट्यसुधा " ने किया । इसमें हमारा समाज जातिभेद के बंधनो में किस तरह जखडा हुआ है, यह दिखाया है । साथ ही गाँव में बारिश के कारण बाढ आती है और सारे गाँव में पानी भर जाता है तब अस्पृश्य लोगों के टीले पर उच्च जाति के लोगों ने लिया सहारा, उनके मन से स्पृश्य - अस्पृश्यता के बंधनों की बाढ की किस तरह बहा ले जाता है, यह दिखाया है ।यहाँ जातियता की समस्या को उठाकर उससे मुक्त होने के उपाय को बताकर नाटककार यही कहना चाहता है कि जातिभेद के बंधनो से मुक्त होने पर ही मानव का कल्याण है ।

मध्यप्रदेश शिक्षा और संस्कृति विभाग दवारा आयोजित नाट्यलेखन प्रतियोगिता में इस नाटक को दवितीय पुरस्कार मिला है ।

1.3.8 बंधन अपने - अपने :

इस नाटक में एक ओर आधुनिक समाज में शिक्षा क्षेत्र में फैली भ्रष्टाचार प्रवृत्ति को उजागर किया है तो दूसरी ओर महत्वकांक्षा की धुन में गृहस्थी से दूर रहनेवाले डॉ. जयंत की खोखली महानता का पर्दाफाश किया है । जो अपनी महत्वकांक्षा के बाद उत्पन्न हुए एकाकीपन और अकेलेपन के दुःख को सह नहीं पा रहे है । साथ ही यह भी बताया गया है कि हर व्यक्ति की अपनी - अपनी सीमाएँ होती है , अपने बंधन होते है, उन्हीं के अनुसार व्यक्ति को अपना आचरण करना चाहिए ।

1.3.9 खजुराहो का शिल्पी :

सन 1970 में लिखे इस नाटक ने डॉ. शंकर शेष को नाटककार के रूप में राष्ट्रीय मंच पर लाने का महत्वपूर्ण कार्य किया । यह नाटक वास्तविक रूप से रेडिओ प्रसारण के लिए लिखा गया था । इस नाटक का प्रसारण सभी प्रादेशिक भाषाओं में किया गया । यह शेष का बहुचर्चित नाटक है ।

इस नाटक में शेष जी ने खजुराहों के मंदिरों के निर्माण में कौनसा उद्देश रहा होगा इस पर अपने तर्कनिष्ठता के अनुसार प्रकाश डाला है । संसार में कामभावना निरंतर गतिशील भावना बनकर स्थायी रही है । लाख कोशिशों के बावजूद ' मोह का क्षण ' मनुष्य जाति पर हावी रहा है । जिस कारण मनुष्य को कितनी ही मुश्किलों का सामना करना पडता है, कितनी ही ठोकरें खानी पडती है । फिर भी वह इससे बच नहीं पाता । इसका मर्मस्पर्शी चित्रण इसमें किया है ।

1.3.10 फंदी :

कथ्य और शिल्प की दृष्टि से इसमें अनोखा प्रयोग किया गया है । आज समाज में " इच्छा मृत्यु " यह नया विचार प्रवाह उभर रहा है। इसी को नाटककार ने " फंदी " में चित्रित किया है । तथा इच्छा मृत्यु योग्य या अयोग्य इस प्रश्न को उठाया है । डॉ. लवटे जी कहते है - " नाटककार के सुदीर्घ चिंतन - मनन का परिणाम हैं -'फंदी'।"[14] इस में ट्रक ड्रायव्हर फंदी अपने कैंसर से पीडीत मौत मांगनेवाले पिता को गला घोटकर मृत्यु देता है । क्या इच्छा मरण और इसमें सहायता करनेवाले व्यक्ति अपराधी है ? क्या परिस्थितियों में आये बदलाव के नुसार कानून व्यवस्था में बदलाव जरूरी नहीं ? आदि प्रश्नों को यहाँ उठाया गया हैं ।

1.3.11 एक और द्रोणाचार्य :

सन 1971 में लिखे इस नाटक का प्रथम मंचन भोपाल में हुआ । कलकत्ता की नाट्य संस्था ने इस नाट्य रचना को सन 1975 की श्रेष्ठ नाट्य कृति घोषित किया । इसका तमिल में भी अनुवाद हुआ है ।

इस में से महाभारत की कथा गुरू द्रोणाचार्य का मिथ लेकर इसे आधुनिक शिक्षा व्यवस्था और व्यक्तियों से जोड दिया है । इस संदर्थ में डॉ. लवटे जी कहते हैं - " आधुनिक शिक्षा व्यवस्था में होनेवाला अध्यापक एक ऐसा जीव है, जिसे सुविधा और सुरक्षा का निहायत आकर्षण है ।" [15] वह अपनी आत्मा को भी इसके लिए बेच डालता है । अत : अध्यापक की जिंदगी की शोकांतिका, व्यवस्था के हाथ बिक जाने, सत्व खोने की प्रवृत्ति को प्रा. अरविंद के माध्यम से उजागर किया है । साथ ही यह भी बताया गया है कि यह परंपरा महाभारत काल के गुरू द्रोणार्चाय से चली आ रही है । जिन्होंने

एकलव्य से उसका अंगूठा व्यवस्था के नाम पर अन्यायपूर्वक माँग लिया था । डॉ. शेष शिक्षा व्यवस्था में फैले इस अनाचार व्यवस्था से बैचेन थे इसीकारण इस नाटक के जरिए उन्होंने स्वप्रज्ञ गुरू के निर्माण की माँग की हैं ।

1.3.12 कालजयी :

मराठी और हिंदी दोनों भाषाओ में यह नाटक लिखा गया हैं । यह नाटक हिंदी रंगमंच पर अब तक खेला नहीं गया है पर मराठी रंगमंच पर इसका सफल मंचन हुआ है ।

इस नाटक में राजा कालजयी के अन्याय अत्याचारों से पीडित जनता कालजयी के खिलाफ किस तरह आंदोलन कर उसे खत्म कर देती है यह दर्शाया है । यहाँ जनता के दव़ारा सत्ता में परिवर्तन दिखाकर शेष ने जनता कि शक्ति की महत्ता को सिदध़ किया है । " कालजयी की मृत्यु पूरबी जैसी स्त्री के हाथों से दिखाकर नाटककार ने समझाया है कि " राजनीति में जो तलवार से बचते है, उन्हें कभी -कभी फूल से कटना पडता है ।" [16]

1.3.13 घरौंदा :

सन १९७४ में लिखा गया यह नाटक पहली बार बंबई में मंचित हुआ । श्री भीमसेन दव़ारा इस पर फिल्म भी बनायी गयी जिसे 'आशिर्वाद' प्रतियोगिता में सर्वश्रेष्ठ पटकथा का पुरस्कार मिला ।

इसमें महानगरीय जीवन में आवास की समस्या किस तरह जिंदगी और मौत की समस्या बन गयी हें यह दर्शाया है । इस नाटक की नायिका छाया और नायक सुदीप चाहकर भी इसलिए शादी कर नही पाते क्योंकि उनके पास रहने के लिए घर नहीं है । मध्यवर्गीय लोगों के लिए घर की समस्या कितनी भीषण बन चुकी है इसका यथार्थ चित्रण इसमें किया है ।

1.3.14 अरे! मायावी सरोवर :

यह नाटक लोकनाट्य शैली में लिखा गया है। श्री.सत्यदेव दुबे जी के निर्देशन में प्रथम इसका मंचन हुआ । यह रचना महत्वपूर्ण है । इसमें बताया गया है कि स्त्री और पुरूष के आपसी सामंजस्य के कारण ही समाज व्यवस्था अच्छी तरह चल सकती है। अतः पुरूष को चाहिए कि वह स्त्री को समझ ले और स्त्री कि चाहिए की पुरूष को समझ ले दोनों भी महत्वपूर्ण है । इस संदर्भ में डॉ.सुनीता मंजनबैल लिखती हैं -" एक के अभाव में दूसरा अधूरा हैं।" [17] आज स्त्री - पुरूषों में वृत्तिगत खायी दिखाई देती अगर इसे मिटाना हैं तो निहायत जरूरी है स्त्री - पुरूषों में आपसी समझ । तभी एक सुखमय जीवन जीया जा सकता हैं । इसी की ओर यह नाटक इशारा करता है ।

1.3.15 रक्तबीज :

इसके संदर्भ में डॉ.मधुकर हसमनीस लिखते हैं --" इस नाटक का रचनाकाल 1976 है । यह डॉ. शेष की चिंतनप्रधान नाट्यकृति है । इसका पहला मंचन बंबई सुप्रसिध्द रंग संस्था ' अविष्कार ' ने छबीलदाल हाईस्कूल के प्रेक्षागृह में 30 मार्च 1978 को किया । तब से अब तक संस्था इसके साठ मंचन कर चुकी है । इसका निर्देशन भी अरविंद देशपांडे ने किया है ।" [18]

रमेश गौतम कहते हैं --" वस्तुतः एक पौराणिक प्रगतीक का सहारा लेकर नाटककार ने आधुनिक बुध्दिजीवी वर्ग का पर्दाफाश किया है, जो सत्ता और व्यवस्था से जुडकर अपने स्वार्थ साधते - साधते निरीह और विवश बन गया है । " [19]

हर छोटा आदमी बडा बनना चाहता है । इसके लिए उसे मेहनत ईमानदारी आदि रास्तें निरर्थक महसूस होते हैं। तब छोटा आदमी अपने इमान का निलाम कर बडे आदमी का इस्तेमाल कर बडे बनने की ख्वाईश रखता है। इसमें वह अपने स्त्री की भी बलि देता है । इसके बदले पाता है टी.वी., फ्रिज,कार,केबीन आदि भौतिक सुख- सुविधाएँ । अतः प्रतिष्ठा, बडप्पन, महत्वकांक्षा आदि इस दुनिया के लोगों के खून के रक्तबीज बन गये है जिसे खत्म करना मुश्किल हो गया है । यही नाटककार इस नाटक के जरिए बताना चाहता हैं ।

1.3.16 राक्षस :

यह नाटक लोकनाट्य शैली में लिखा गया है । समूहनाट्य होने के कारण पात्रों की अधिकता है । इसमें मुख्य तथा गौण कुल पात्र है । इसमें गीतों की भी अधिकता है ।

इसमें दिखाया गया है कि राक्षस याने हमारा विध्वसंक वैज्ञानिक अविष्कार एटम,युरेनियम, हायड्रोजन आदि परमाणू बमों का निर्माण है । जिसे विश्व के महासत्ताधारिओं ने पाला,पोसा है । विश्वास नगर ऐसा गाँव है जहाँ के लोगों को राक्षस ने परेशान किया है । सारे गाँव के लोग चिंतित है । आखिर राक्षस से समझौता कर हर रोज एक आदमी राक्षस के पास भेजने का फैसला होता है । मगर श्वेतादेवी नामक स्त्री इसका विरोध करती है। वह गाँव के युवको में संगठन निमार्ण कर राक्षस का वध करती हैं। इससे नाटककार ने आण्विक युध्दों की विनाशकारिता की तरफ हमारा ध्यान खींचकर हमें सजगता का इशारा दिया है ।

1.3.17 पोस्टर :

इसके संदर्भ में डॉ.मधुकर हसमनीस लिखते हैं --" इस नाटक का रचनाकाल 1977 हैं । 'पोस्टर ' महाराष्ट्र की कीर्तन शैली में लिखा लोकनाट्य हैं। डॉ.शेष की यह प्रभावकारी नाट्य रचना

है। पोस्टर के सामुहिक अभिनय की तुलना मराठी नाटक ' **घासिराम कोतवाल** ' से की जा सकती है। ' पोस्टर ' नाटक प्रथम मंचन ' आविष्कार ' बंबई ' द्वारा किया.गया। सुवर्ण महोत्सवी प्रयोग कर पोस्टर ने आधुनिक हिन्दी नाटय सृष्टि में नया किर्तिमान स्थापन किया है। " [20]

इस नाटक में आदिवासी लोंगो पर जमींदार लोग किस तरह जुल्म कर अपने घर आबाद करते है यह दर्शाया है। अनपढ़ लोगों को अपने खेती -- कारखानों में रोजाना एक रुपया मजदूरी देकर काम करवाया जाता है। इसके संदर्भ में डॉ.सुनीता मंजनबैल लिखती हैं --" जिन विश्वासों में पटेल उन्हें जीवित रखना चाहता है, वैसे ही ये मजदूर जीते है। इसीलिए उनकी बहू -- बेटियों की इज्जत लूटने पर, यह निर्धन जनता खामोश रहती है, एक परंपरा के रुप में इस बात को स्वीकार करती है। "[21] और जब कोई मजदूर इनके खिलाफ आवाज उठाना चाहता है, तो उसे खत्म कर दिया जाता है या झूठ बोलकर उसे जेल भिजवाया जाता है। यही इस नाटक के मजदूर कल्लू के साथ होता है। उसे जेल भिजवाकर उसकी बीवी को पटेल की हवेली पर पहुँचाया जाता है। अंततः नाटककार ने कल्लू की हार - जीत का फैसला पाठक दर्शकों पर छोडकर कल्लू की महत्ता को स्वीकार किया है।

1.3.18 चेहरे :

आज के इस आधुनिक युग में हर व्यक्ति अपने चेहरे पर दूसरा चेहरा पहने जीता है। वह जो होता है वह दिखाता नहीं, जो नहीं है उसे दिखाने के प्रयास में लगा रहता है। आश्चर्य की बात यह है कि हर व्यक्ति दूसरे का नकली चेहरा उतार कर उसका असली चेहरा उजागर करने के प्रयास में रहता है। आज हमें नकली बातों में रहने की आदत हो गयी है।

इस नाटक में भी समाजसेवी भरोसे जी की मृत्यु और उसके शव के अंत्यसंस्कार की यात्रा आदि को चित्रित करते हुए यात्रा में शामिल हर व्यक्ति के असली चेहरे को बेनकाब किया है। शवयात्रा में शामिल व्यक्ति केवल रस्मोरिवाज, कर्मकांड को निभाने की धारणा से शामिल हुआ है।बारिश के कारण शवयात्रा बीच में ही रोखकर एक खंडहर में आसरा लिया जाता है तो शवयात्रा में शामिल लोग गप्पें हाकना, शतरंज खेलना, शराब पीना, ट्रान्सिस्टर न होने से चिंतित होना आदि बर्ताव करते है। इन सबके जरिए नाटककार ने इंसान की संवेदनहीन, स्वार्थी प्रवृत्ति को उजागर किया है।

1.3.19 कोमल गांधार :

डॉ. शंकर शेष का झुकाव रामायण, महाभारत की ओर रहा है। उन्होंने ऐतिहासिक मिथकीय प्रसंगों को लेकर उसे आधुनिक स्थिति से जोडने का प्रयास कर यह दर्शाया है कि परिस्थितियाँ बदल

जायें फिर भी कुछ परंपराये आज भी कायम है भले ही वह अयोग्य , अन्यायी क्यों न हो । शेष को गांधारी की असामान्य दृढता ने मोह लिया । जिसकी उपज कोमल गांधार है ।

यहाँ शेष ने गांधारी के माध्यम से उसके जीवन संघर्ष को प्रस्तुत किया है। तथा गांधारी और कुंती की तुलना कर की जीवन के तरफ देखने की दृष्टि को प्रकट किया है। गांधारी ने उसे मिले धोखे के कारण आँखो पर पट्टी बाँध ली और संसार के प्रति उदासिनता दिखाई तो दूसरी तरफ कुंती ने इस जीवन में भी सार्थकता ढूँढने का प्रयास किया। इसके बारे में संदर्भ में डॉ.सुनीता मंजनबैल बताती हैं -- " गांधारी और कुंती के प्रसंग दवारा नाटककार ने जीवन में नकारात्मक दृष्टि का खण्डन किया है और सकारात्मक जीवन - दृष्टि को ही स्वस्थ सृजनात्मक मानते हुए उसका प्रतिपादन किया है ।"[22]

1.3.20 त्रिकोण का चौथा कोण :

यह नाटक 1979 में लिखा गया है । यह नाटक शेष जी ने दूरदर्शन के अधिकारी के माँग पर लिखा । यह तीन अंको में है । लेकिन अभी तक यह प्रकाशित नहीं हुआ है क्योंकि इसकी पांडुलिपि भी अप्राप्य है ।

1.3.21 आधी रात के बाद :

शेष जी की यह अंतिम नाट्यकृति है । समाज के सफेदपोश लोगों के आचरण पर प्रहार करने के उद्देश से यह नाटक लिखा गया है । नाटक की सारी घटनाएँ आधी रात के बाद घटित होती है। इस रहस्यात्मक नाटक में दिखाया गया है कि जज के घर चोरी करने आया चोर जज की चोरी को उजागर कर देता है। अतः समाज में प्रतिष्ठित, सफेदपोश कहलाने वाले लोगों की काली करतूतों को समाज के सामने लाना इस नाटक का उद्देश है।

1.4 अन्य कृतियाँ :

1.4.1 एकांकी :

शंकर शेष जी बहुमुखी साहित्यकार थे । नाटक के साथ साथ उन्होंने एकांकी लेखन भी किया । उनके नाम पर छः एकांकी नाटक है । वह निम्न प्रकार से विश्लेषित किये हैं ।

1.4.1.1 विवाह मंडप :

यह एकांकी नाटक सन 1957 में लिखा गया । इसका प्रथम मंचन शेष जी ने अपने कॉलेज में किया । दूसरी बार इसका मंचन ' मॉरिस ' कॉलेज में हुआ । यह एकांकी नाटक उपलब्ध नहीं है ।

1.4.1.2 हिन्दी का भूत :

यह एकांकी नाटक सन 1958 में लिखा गया ।शेष जी का यह पहला व्यंगात्मक शैली में लिखा एकांकी है।

1.4.1.3 त्रिभुज का चौथा कोणः

सन 1971 में यह कृति रेडिओ प्रसारण हेतु लिखी थी। यह कृति अनुपलब्ध है । इस बारें में डॉ.शिवाजी पवार ने लिखा हैं --" रेडिओ प्रसारण के बाद सितंबर 1976 में इसका दूरदर्शन से भी प्रसारण हुआ । दूरदर्शन के इस प्रसारण की श्री इकबाल मसूद द्वारा प्रस्तुत समालोचना द्रष्टव्य हैं जिससे इस कृति के कथ्य पर भी कुछ प्रकाश पड जाता है । अपने आस्तित्व और प्रगति के लिए संघर्ष रत शहरी मध्य - वर्ग की सीमा नामक युवती अपने कॉलेज के युवा मित्र से विवाहपूर्व संबंधों के लिए इंकार करती है । परंतु बाद में वही एक बुद्धिवादी कवि, प्रौढ कार्यालयीन अधिकारी तथा उसके वंचक सहायक के हाथों उनका शिकार बनती हैं । बाद में उसका पुराना कॉलेज साथी उसकी अपराध भावना को नष्ट करने में सफल होता हैं। इस प्रेम -त्रिकोण का अनिवार्य चौथा कोण उसके बच्चें हैं, जो नारी - जीवन की अंतिम परिणिति हैं।"[23]

1.4.1.4 पुलिया :

ठेकेदार साबू को पुलिया बनाने का ठेका सरकार की तरफ से मिला हैं। मगर सरकार की तरफ से मिला सारा पैसा, सीमेंट, मिट्टी आदि ठेकेदार साबू, उसका साथी लक्खी और सरकारी अफसर लल्लू गबन कर खा जाते हैं। "इनके माध्यम से डॉ.शेष ने तथाकथित रचनाकार कहलानेवाले ठेकेदारों अभियंताओं, अफसरों की अत्यंत स्वार्थपरता व देशद्रोहिता का पर्दाफाश किया हैं ।"[24] इन्हीं भ्रष्टचारिओं की वजह से समाजहित के कितने ही काम वैसे के वैसे ही रह जाते है। पुलिया कभी बनती ही नहीं इसे दर्शाया है।

1.4.1.5 अजायबघर :

सन 1981 में यह एकांकी शेष दूरदर्शन के लिए लिखा था । तथा इसके प्रस्तुतिकरण के संदर्भ में दूरदर्शन तंत्र तथा उसकी सीमाओं का पूरा ध्यान रखा गया है । इस संदर्भ में डॉ. लवटे लिखते

हैं -- " शिक्षित एवम अमीर परिवारों की कृत्रिम जिन्दगी को उभारने के उद्दशे से लिखी इस एकांकी में डॉ. शेष ने पात्रों के मानसिक व्दंद को बडे प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया हैं ।" [25]

1.4.1.6 एक प्याला काफी था :

सन 1979 में यह एकांकी लिखा गया हैं । यह एकांकी अनुपलब्ध है ।

1.4.2 बाल नाटक :

शेष ने नाटक, एकांकी के साथ -साथ बाल नाटक लिखे हैं । जिसमें से दो स्वतंत्र तथा चार अनुदित बालनाटक लिखे। उनके बाल नाटकों का भी सफल मंचन हुआ है ।

1.4.21 दर्द का इलाज :

यह नाटक सन 1973 में लिखा गया ।

1.4.2 मिठाई की चोरी :

यह बाल नाटक भी सन 1973 में लिखा गया ।

1.4.3 अनूदित नाटक :

शेष मध्यप्रदेश के थे मगर उनका मराठी भाषा पर पूरा अधिकार था । जब बिलासपुर से नागपुर शिक्षा के लिए आये तो मराठी साहित्य से अधिक निकट संबंध आया । मराठी नाटकों ने उन्हें प्रभावित किया । भारतीय नाट्यसृष्टि में मराठी नाट्यसृष्टि क्रियाशील एवम् समर्थ रही हैं । अतः जिन मराठी नाटकों ने शेष को प्रभावित किया उनका अनुवाद उन्होंने हिंदी में कर दिया।

1.4.3.1 दूर के दीप

मराठी के मशहूर नाटककार श्री. वि.वा.शिरवाडकर का लिखा "दूरचे दिवे " नाटक का अनुवाद सन 1959 में शेष ने हिंदी में " दूर के दीप " नाम से लिखा ।

1.4.3.2 पचतंत्र :

सन 1981 में श्री. माधव साखरदांडे के मराठी नाटक ' पंचतंत्र ' का किया अनुवाद शेष की अंतिम साहित्यकृति है ।

1.4.3.3 और एक गार्बो :

महेश एल कुंचवार लिखित ' गार्बो ' नाटक का यह अनुवाद हैं । इसमें वेश्यागमन करनेवाले लोंगों की जिंदगी और मानसिक स्थिति का चित्रण किया है। इस संदर्भ में डॉ. लवटे लिखते हैं --" द्वितीय विश्वयुध्दोत्तर परिस्थितियों की पृष्ठभूमि पर लिखा यह नाटक एक सामाजिक विश्लेषण है।" [26]

1.4.3.4 चल मेरे कद्दू ढुम्मक ढुम्म :

मूल मराटी नाटक " चल रे भोपळया टुणूक टुणूक " श्री. अच्युत वझे द्वारा लिखा गया है। इसका अनुवाद शेष ने "चल मेरे कद्दू ढुम्मक ढुम्म " से किया हैं। यहाँ कद्दू दिखावटी मनुष्य का प्रतिक हैं । इस संदर्भ में डॉ. लवटे लिखते हैं --" आज का आदमी बाहरी दिखावे का प्रेमी हैं। अतः वह स्थूल हैं। इस स्थूलता में जीवन का खोकलापन भरा हुआ हैं ।" [27]

नाटक बंबई जैसे महानगर में रहनेवाले मध्यवर्ग लोंगों के जिंदगी को दर्शाता हैं। " भाऊराव " मकान मालिक हैं । उसे अपने किरायेदारों पर रोष झाड़ना आता हैं मगर अपने बच्चों के तरफ होनेवाले उत्तरदायित्व की तरफ उसका बिल्कुल ध्यान नहीं है। उसकी लडकी ज्यूडी पढीलिखी और पाश्चात संस्कृति की प्रेमी हैं । उनके घर ' पेइंग गेस्ट' के रूप में रहनेवाले बांदेकर नाम के युवक से वह प्यार करती हैं। बांदेकर उससे विवाह भी कर लेता हैं। पर उन्हें बच्चा होने के बाद बांदेकर जिंदगी का खोखलापन अनुभव करने लगता हैं। अतः आज का आदमी धन और सत्ता की दौड में व्यग्र हैं लेकिन जब उसे हासिल कर लेता हैं, तब उसे खोखलेपन का अनुभव होने लगता हैं ।

1.4.4 उपन्यास :

नाटक और उपन्यास दोनों विधाओं में वैसे देखा जायें तो बहोत अंतर हैं। शेष ने नाटककार होते हुए भी उपन्यास लेखन भी किया हैं । यह उन्हें उनकी बहुमुखी प्रतिभा के कारण ही संभव हो सका हैं । शेष के उपन्यास लेखन के बारे में डॉ.लवटे लिखते हैं -" उपन्यास पढते समय लगता हैं कि, उपन्यासकार हमसे बातें कर रहा हैं । उपन्यास कथनात्मक शैली में लिखने की उनकी पद्धति बेहद आकर्षक हैं ।" [28] इसका प्रत्यय सचमुच ही शेष के उपन्यास पढ़ते समय होता हैं । नाटक की तरह उपन्यास लेखन में भी वे सफल हुए हैं ।

1.4.4.1 तेंदू के पत्ते :

यह उपन्यास 1956 में लिखा गया हैं । यह उपन्यास अनुपलब्ध होने से इसके बारे में अधिक जानकारी नहीं मिलती ।

1.4.4.2 चेतना :

यह उपन्यास 1971 में लिखा शेष का दूसरा उपन्यास हैं । "चेतना " और शेष का " बंधन अपने अपने " नाटक दोनों की कथावस्तु एक ही हैं । इसमें शिक्षा व्यवस्था में फैले भ्रष्टाचार का चित्रण किया हैं ।

1.4.4.3 खजुराहो की अलका :

यह उपन्यास 1972 में लिखा गया । ' खजुराहो का शिल्पी ' इस नाटक की और ' खजुराहो की अलका ' इस उपन्यास की कथावस्तु एक ही हैं । डॉ.शंकर शेष ने नाटक में पूर्णरूप में अपनी बात न कह पाने के कारण उसका विस्तृत चित्रण उन्होंने उपन्यास ' खजुराहो की अलका ' में किया हैं ।

1.4.4.4 धर्मक्षेत्रे - कुरूक्षेत्रे :

सन 1980 में लिखा यह उपन्यास शेष की अधूरी कृति हैं । इस संदर्भ में डॉ.सुनीता मंजनबैल लिखती हैं --"इसका लिखित अंश 'सारिका' के 301 वे अंक में प्रकाशित हुआ था । प्रकाशित अंश के आधार पर कहा जा सकता हैं कि शायद यह उपन्यास वे ' भीष्म की आत्मकथा ' के रूप में लिखना चाहते थे ।" [29] मगर दुर्भाग्यवश यह उपन्यास उनकी मृत्यु के कारण अधूरा ही रहा ।

1.4.5 अनुसंधान कार्य :

शेष ने नाटक, बाल नाटक, उपन्यास आदि के साथ -साथ अनुसंधान का कार्य भी किया हैं । उनके अनुसंधान का कार्य देखकर लगता हैं वह किसी भाषा वैज्ञानिक से कम नहीं ।

1.4.5.1 हिंदी और मराठी कथा साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन :

शेष जी हिंदी और मराठी दोनों भाषाएँ अच्छी तरह से जानते थे। इसीसे प्रेरणा लेकर उन्होंने पीएच. डी. उपाधि के लिए ' हिंदी और मराठी कथा साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन ' यह विषय लेकर शोधग्रंथ प्रस्तुत किया । इसके लिए उन्हें डॉ.गोपाल गुप्ता का निर्देशन मिला । सन 1961 में उनके इस प्रबंध को स्वीकृति दे नागपुर विश्वविद्यालय ने उन्हें पीएच.डी.की उपाधि से गौरवान्वित किया।

1.4.5.2 छत्तीसगढ़ी का भाषाशास्त्रीय अध्ययन :

डॉ. शंकर शेष सामंत परिवार में जन्मे थे । उनके यहाँ जो नोकर - नोकरानियाँ थी वह छत्तीसगढ़ परिवेश की थी । अत : छत्तीसगढी के प्रति जिज्ञासा बचपन से ही शेष को थी । इसी जिज्ञासा ने उन्हें छत्तीसगढी का भाषाशास्त्रीय अध्ययन करने के लिए प्रेरित किया । उनके इस अध्ययन को मध्यप्रदेश ग्रंथ अकादमी ने प्रकाशित कर उनके काम को गौरव प्रदान किया । इस अध्ययन में उन्होंने छत्तीसगढ़ी का परिक्षण, अवलोकन किया तथा आदिम जातियों की घने जंगलों में होनेवाली बस्तियों में जाकर उससे साधन जुटाये। इतना कठिन कार्य शेष जी जैसा अध्ययन प्रेमी इंसान ही कर सकता हैं ।

1.4.5.3 आदिम जाति शब्द संग्रह एवं भाषाशास्त्रीय अध्ययन :

शेष ने यह शोधग्रंथ सन 1967 में लिखा है । डॉ.शेष के ' छत्तीसगढी का भाषाशास्त्रीय अध्ययन ' के कारण मध्यप्रदेश सरकार ने उनकी नियुक्ति भोपाल में भाषा और संस्कृति विभाग के अनुसंधान अधिकारी के रूप में की थी। इस काल में आदिम जाति शब्दावली का संग्रह किया, परंतु काम की बहुलता के कारण यह कार्य अधुरा ही रह गया ।

1.4.6 पटकथा :

शेष ने पटकथा लेखन भी किया है।उनके " घरौंदा " और " दूरियाँ " फिल्म के लिए लिखे पटकथा संवाद ने उन्हें अमर बना दिया । इनकी पटकथाओं में वास्तववादीता और यथार्थ के दर्शन होते है ।

1.4.6.1 घरौंदा :

भीमसेन के निर्देशन में बनी घरौंदा फिल्म को सन 1978 का आशीर्वाद पुरस्कार प्राप्त हुआ । इनकी पटकथा शेष जी के घरौंदा नाटक पर आधारीत थी । शेष ने इसे पटकथा रूप में लिखकर भीमसेन जी को दी थी ।

1.4.6.2 दूरियाँ :

दूरियाँ को भी इसकी पटकथा के लिए सन 1971 में आशीर्वाद पुरस्कार के साथ -साथ " फिल्म फेअर " का सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार प्राप्त हुआ ।

1.4.6.3 सोलहवाँ सावन :

चित्रपट कथा लेखन के साथ शेष जी ने पटकथा संवाद लेखन भी किया । "सोलहवाँ सावन " फिल्म का पटकथा संवाद लेखन शेष जी ने किया ।

1.4.6.4 पोस्टर :

' पोस्टर ' नाटक पर आर .के. विल के निर्देशन में फिल्म बन चुकी है ।

1.4.6.5 घुटन :

' बिन बाती के दीप ' नाटक के आधार पर ' घुटन 'नाम से फिल्म बनायी गयी।

1.4.6.6 आक्रोश :

इस गोविंद निहलानी के फिल्म के कुछ दृश्यों का लेखन शंकर शेष जी ने किया है ।

1.4.6.7 खजुराहों का शिल्पी :

' खजुराहों का शिल्पी " इस नाटक के आधार पर बंबई में ' चिरन्तन ' नामक फिल्म बनायी गयी हैं ।

1.4.7 कहानी :

शेष जी ने बहोत सी कहानियाँ लिखी हैं मगर वह उपलब्ध नहीं हो सकी हैं । मुझे डॉ. सुनिता मंजनबैल की पुस्तक "शंकर शेष व्यक्तित्व एवं कृतित्व " में दो कहानियों का संक्षिप्त विवेचन प्राप्त हुआ है उन्हे मैंने अपने शब्दों में प्रस्तुत किया हैं ।

1.4.7.1 चेहरे :

इस कहानी के जरिए शेष ने यह बताने का प्रयास किया हैं कि हमें व्यक्ति जो नजर आता हैं वह ही नहीं होता उसके पीछे भी कोई रूप छिपा रहता हैं । रणदिवे नाम का इंसान ऑफिस में छोटासा आधिकारी है । वह वक्त से ऑफिस आता हैं और वक्त पर घर चला जाता हैं । इस कारण ऑफिस के लोगों में उसके बारे में कुतूहल निर्माण होता हैं। तब उसका साथी ऑफिस छुटने के बाद उसका पीछा करता हैं । घर पहुँचने पर रणदिवे की अत्यंत कुरूप बीवी को देख वह आश्चर्यचकित रह जाता हैं । पर जब रणदिवे तुरंत ही फिर बाहर निकल पडता तो उसका साथी फिर उसका पीछा करता हैं और पाता है की रणदिवे एक बडी-सी झोपडपट्टी की एक झोपडी में सात आठ बच्चों को पढा रहा है। तब उसके

अपने पर आत्मग्लानि होती है और महसूस होता हैं कि रणदिवे ही वास्तव में सार्थक जिंदगी जी रहा है ।

1.4.7.2 और वे वहाँ पहुँच गये :

शेष जी ने अपनी नौकरी काल में गाँव के लोगों कों बहुत नजदिक से देखा जाना था । जब "अदिम जाती अनुसंधान अधिकारी " के पद पर नियुक्त थे तब उन्होंने आदिम लोगों की तकलिफें मजबूरी को देखा था इसी का उद्धरण उनके नाटकों में भी हुआ है । और इस कहानी में भी हुआ है । इस कहानी में शहर के उच्चवर्गीय कहलाने वाले सफेदपोश लोग जब गाँव में जाते है तब गाँव की लोगों की तरफ देखने का उनका जो नजरियाँ होता हैं उसे दर्शाने का प्रयास किया हैं । डॉ. सुनिता मंजनबैल भी लिखतो हैं "प्रस्तुत कहानी भी गाँव की जिन्दगी की वास्तविकता का परिचय कराती हैं । साथ ही गाँव की जिंदगी को देखने का तथाकथित सुरक्षित उच्चवर्गीय शहरी लोगों का नजरिया भी पेश करती है ।" [30]

निष्कर्ष :

शंकर शेष के स्वभाव के विविध पहलू नजर आते हैं। जहाँ एक और वह मिलनसार,हसमुख,विनम्र स्वभाव के थे तो दूसरी ओर अनुशासन प्रिय, आदर्श अध्यापक तथा श्रेष्ठ प्रशासक के रूप में नजर आते है। उनमें आत्मसुधार की भावना थी। उन्होनें खुद को कभी दूसरों से विशिष्ट इंसान नहीं समझा । इस कारण अन्य लोगों ने भी उन्हें कभी पराया आदमी नहीं माना । वे लोगों के दिलो कों अपनी विनम्रता से छू लेते थे ।

घर से मिले अच्छे संस्कार,साहित्यिक,धार्मिक माहोल आदि से बाल्यावस्था से ही शेष साहित्य के तरफ आकृष्ट हुए ।तभी से एक श्रेष्ठ साहित्याकार तथा नाटककार का उदय हुआ ।उनके पिता की नाटक की रूचि उनमें भी कहीं बचपन से ही सुप्त रूप से थी जो आगे चलकर पनप उठी । शेष जी ने हिंदी नाट्यविद्या को समृद्ध बनाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया हैं। उन्होंने सामाजिक , पौराणिक , ऐतिहासिक तथा समकालीन विभिन्न विषयों पर नाटक लिखे । उन्होंने रामायण , महाभारत से लेकर आधुनिक समाज की विभिन्न समस्याओं तथा विषयों पर अपने नाटक प्रस्तुत कर प्रयोगशील नाटककार के रूप में सफलता पायी ।

उन्होंने नाटक के साथ-साथ उपन्यास, कहानी, कविता, एकांकी, चलचित्र, दुरदर्शन, अनुवाद आदि विधाओं में भी लेखन किया हैं । इससे उनकी बहुविध प्रतिभा का पता चलता हैं । शेष जी ने लिखे भाषाशास्त्रीय ग्रंथों सें लेकर राजभाषा हिंदी को सरलता ओर सफलता - पूर्वक बैंको में

क्रियान्वयन करने में जों महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है वह काबीलें तारिफ हैं। फिर भी वे नाटककार के रूप में ही जाने जाते हैं । कुछ अपवादों कों छोड उनके सभी नाटकों का सफलता से मंचन हो चुका है । वे आधुनिक काल के हिंदी नाट्यसृष्टि के सशक्त नाटककार थे । हिंदी नाट्यसृष्टि को समृद्ध बनाने के लिए उन्होंने दिया हुआ योगदान हम कभी भूला नहीं पायेंगें ।

संदर्भ ग्रंथ -सूची

1.डॉ.नगेन्द्र	आधुनिक हिन्दी नाटक	भूमिका
2.डॉ.सुनीलकुमार लवटे	नाटककार शंकर शेष	पृ.क्र.2
3.सं.डॉ.वेनय	शंकर शेष रचनावली -- सबसे अंत में सबसे पहले	पृ.क्र.13
4.सं.डॉ.विनय	शंकर शेष रचनावाली सबसे अंत में सबसे पहले	पृ.क्र. 14
5.डॉ.प्रकाश जाधव	डॉ शंकर शेष का नाटक साहित्य	पृ.क्र. 17
6.डॉ.सुनीलकुमार लवटे	नाटककार शंकर शेष	पृ.क्र. 6
7.डॉ.सुनीलकुमार लवटे	नाटककार शंकर शेष	पृ.क्र. 5
8.डॉ.सुनीलकुमार लवटे	नाटककार शंकर शेष	पृ.क्र. 6
9. सं.डॉ.विनय	शंकर शेष रचनावाली एक साथ की गाथा	पृ.क्र. 41
10.डॉ.सुनीलकुमार लवटे	नाटककार शंकर शेष	पृ.क्र. 30
11.डॉ.सुरेश गौतम डॉ.विणा गौतम	राजपथ से जनपथ नटशिल्पी शंकर शेष	पृ.क्र. 63
12. डॉ.सुनिता मंजनबैल	शंकर शेष व्यक्तित्व एवं कृतित्व	पृ.क्र. 150
13.डॉ.मधुकर हसमनीस	डॉ.शंकर शेष के नाटकों का अनुशीलन	पृ.क्र. 39

14.डॉ.सुनीलकुमार लवटे	नाटककार शंकर शेष	पृ.क्र. 73
15.डॉ.सुनीलकुमार लवटे	नाटककार शंकर शेष	पृ.क्र. 48
16.डॉ.सुनीलकुमार लवटे	नाटककार शंकरशेष	पृ.क्र. 52
17.डॉ.सुनीता मंजनबैल	शंकर शेष व्यक्तित्व एवं कृतित्व	पृ.क्र. 59
18.डॉ.मधुकर हसमनीस	डॉ शंकर शेष के नाटकों का अनुशीलन	पृ.क्र. 42
19.रमेश गौतम	हिन्दी के प्रतिक नाटक	पृ.क्र.259,260
20.डॉ.मधुकर हसमनीस	डॉ शंकर शेष के नाटकों का अनुशीलन	पृ.क्र. 42
21.डॉ.सुनिता मंजनबैल	शंकर शेष व्यक्तित्व एवं कृतित्व	पृ.क्र. 182
22.डॉ.सुनिता मंजनबैल	शंकर शेष व्यक्तित्व एवं कृतित्व	पृ.क्र. 92
23.डॉ.श्री शिवाजी पोवार	डॉ शंकर शेष के घरौंदा नाटक का कथ्य और शिल्प	पृ.क्र. 21
24.डॉ.सुनिता मंजनबैल	शंकर शेष व्यक्तित्व एवं कृतित्व	पृ.क्र. 211
25.डॉ.सुनीलकुमार लवटे	नाटककार शंकर शेष	पृ.क्र. 83
26.डॉ.सुनीलकुमार लवटे	नाटककार शंकर शेष	पृ.क्र. 85
27.डॉ.सुनीलकुमार लवटे	नाटककार शंकर शेष	पृ.क्र. 86
28. डॉ.सुनीलकुमार लवटे	नाटककार शंकर शेष	पृ.क्र. 88
29. डॉ.सुनिता मंजनबैल	शंकर शेष व्यक्तित्व एवं कृतित्व	पृ.क्र. 221
30. डॉ.सुनिता मंजनबैल	शंकर शेष व्यक्तित्व एवं कृतित्व	पृ.क्र. 224